ISSN : 2395-4132

THE EXPRESSION

An International Multidisciplinary e-Journal

Bimonthly Refereed & Indexed Open Access e-Journal

The Expression Journal

Impact Factor 6.4

Vol. 9 Issue 6 December 2023

Editor-in-Chief : Dr. Bijender Singh

Email : editor@expressionjournal.com

www.expressionjournal.com

The Expression: An International Multidisciplinary e-Journal
(A Peer Reviewed and Indexed Journal with Impact Factor 6.4)
www.expressionjournal.com ISSN: 2395-4132

डॉ. के. शिवराम कांरत का प्रसिद्ध उपन्यास “मैमनगला सुलियल्ली” का कथ्य-शिल्प

डॉ. समिउल्ला साब
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
गवर्नमेंट फर्स्ट ग्रेड कॉलेज, बापूजी नगर
शिवमोग्गा-577201 (कर्नाटक)

::

सारांश

“मैमनगला सुलियल्ली” डॉ. के. शिवराम कारंत का एक प्रसिद्ध उपन्यास है, जो भारतीय समाज में वेश्यावृत्ति और यौन संबंधों के विभिन्न आयामों का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। उपन्यास चार मुख्य नारी पात्रों - भवानी, मंजुला, शारी और चन्द्री के जीवन के माध्यम से, एक ऐसे समाज की झलक प्रस्तुत करता है जहाँ यौन-सुख केवल शारीरिक संतुष्टि तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें बौद्धिक और आत्मिक संतुष्टि का भी समावेश होता है। मंजुला, उपन्यास की केंद्रीय पात्र, जिनके जीवन में सात पुरुषों का आवागमन होता है, वेश्यावृत्ति के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं। कारंत ने मंजुला के जीवन के माध्यम से यौन संबंधों के चार चेहरे प्रस्तुत किए हैं - सामाजिक दबाव में व्यापारिक-वस्तु बनने वाला, तिरस्कृत, धार्मिक नियंत्रण में, और सामाजिक मान्यता प्राप्त संबंध। इस उपन्यास का दूसरा महत्वपूर्ण कथ्य वेश्या समस्या है। कारंत ने वेश्यावृत्ति को केवल एक व्यवसाय के रूप में नहीं, बल्कि एक सामाजिक संस्था के रूप में चित्रित किया है जो विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक कारणों से प्रेरित है। मंजुला और उसके परिवार की कहानी के माध्यम से, कारंत ने दिखाया है कि कैसे समाज के विभिन्न तत्व वेश्यावृत्ति को प्रभावित करते हैं और इसे बनाए रखते हैं। उपन्यास में नारी पात्रों के जीवन के माध्यम से इस प्रथा की जटिलताओं और परतों को उजागर किया गया है, साथ ही यह भी दिखाया गया है कि कैसे ये नारी पात्र अपनी दुर्दशा के बावजूद गरिमा और साहस के साथ जीवन जीती हैं। “मैमनगला सुलियल्ली” समाज में महिलाओं की स्थिति, वेश्यावृत्ति, और यौन संबंधों के विविध पहलुओं पर एक गहन और संवेदनशील चर्चा प्रदान करता है, जो इसे साहित्यिक कृति के रूप में महत्वपूर्ण बनाता है।

कुंजीशब्द

शिवराम कांरत, “मैमनगला सुलियल्ली”, वेश्यावृत्ति, यौन संबंध, नारी पात्र, सामाजिक दबाव, सामाजिक मान्यता।

::

The Expression: An International Multidisciplinary e-Journal
(A Peer Reviewed and Indexed Journal with Impact Factor 6.4)
www.expressionjournal.com ISSN: 2395-4132

डॉ. के. शिवराम कांरत का प्रसिद्ध उपन्यास "मैमनगला सुलियल्ली" का कथ्य-शिल्प

डॉ. समिउल्ला साब
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
गवर्नमेंट फर्स्ट ग्रेड कॉलेज, बापूजी नगर
शिवमोग्गा-577201 (कर्नाटक)

कन्नड भाषा-साहित्य के इतिहास में 'कडलु तीरदा (समुद्र-तटीय) भार्गव' के नाम से चिरपरिचित प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय डॉ. के. शिवराम कारंत जी अत्यंत विलक्षण प्रतिभासंपन्न व्यक्तित्व के धनी रहे। शिवराम कांरत के रूप में कन्नड भाषा-साहित्य को राष्ट्रकवि कुवेंपु के बाद सर्वप्रथम एक महान साहित्यकार मिला था। उन्होंने कन्नड-भाषा साहित्य के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है। कारंत जी का एक साथ कवि, नाटककार, उपन्यासकार, आलोचक, अभिनेता, सिनेमाकर्ता, पत्रकार, बाल-साहित्यकार, 'बालवन' के संस्थापक, विज्ञान शब्द-कोशकार, यक्षगान-लेखक, प्रकाशक, यक्षगान-ब्याले टीम 'यक्षरंग' के जन्मदाता, चित्रकार, समाज-सुधारक, राजनीति-नेता, अध्यापक, प्रखर वक्ता, आत्मकथा-लेखक आदि के रूप में आकलन कर सकते हैं। वे अपने आप में एक संस्था रहे ।इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनकी आत्मकथा 'हुच्चु मनसिन हत्तु मुखगलु' (पागल मन के दस चेहरे) रही है।

शिवराम कारंत जी के लगभग 45 उपन्यास प्रकाशित हैं, उनमें "मरलि मण्णिगे" (धरती की ओर), 'अलिद मेले' (मृत्यु के बाद), 'केवल मनुष्यरु' (केवल मनुष्य), 'चोमन दुडी' (चोमा की डुगडुगी), 'कुडियर कूसु' (कुडियों का शिशु), 'सरसम्मन समाधि' (सरसम्मा की समाधि), 'करुलिन करे' (कोख की पुकार), 'मलेय मक्कलु' (मलेकुडियों की संतान), 'बेट्टद जीव' (पहाडी जीव), 'नंबिदवर नाक नरक' (स्वर्ग-नरक), 'मूकज्जिय कनसुगलु' ('मूकज्जी के सपने), 'मैमनगल सुलियल्ली' (तन-मन) आदि उपन्यास कन्नड उपन्यास साहित्य जगत में 'मील का पत्थर' साबित हुए हैं। ये सारे उपन्यास अपने आप में शिल्प, कथा-सौष्ठव, भाव आदि की दृष्टि से अप्रतिम हैं। इनमें अभिव्यक्त सूक्ष्म से सूक्ष्म अर्थ की रूप-रेखाएँ पाठकों को आकर्षित करती हैं। मतलब, वे सारी रचनाएँ पाठकों को बार-बार पढने के लिए और चिंतन करने के लिए प्रेरित करती हैं। कारंत जी ने इन उपन्यासों के माध्यम से समाज के निम्न और मध्य-वर्ग के सुंदर चित्र पाठकों के सामने लाकर रख दियाहै। मानव-जीवन-दर्शन इनके मूल में रहा है। इनमें यथार्थ की पृष्ठभूमि पर निम्न और मध्य-वर्गीय, विशेषकर नारी समाज की समस्याओं का सुंदर चित्रण होते हुए भी दृष्टिकोण आदर्शवादी ही रहा है।

शिवराम कांरत का अत्यंत प्रसिद्ध लोकप्रिय कन्नड उपन्यास "मैमनगल सुलियल्ली" (जिसका बाद में 'तन-मन' नाम से बी.आर. नारायण ने हिन्दी में अनुवाद किया है, जिसका प्रकाशन सन् 1995 में शब्दाकार

प्रकाशन, 159 गुरु अंगद नगर (वेस्ट) दिल्ली-92 से हुआ है।) का प्रकाशन सन् 1970 में हुआ था; जिसको कन्नड साहित्य का प्रतिष्ठित पुरस्कार "पम्प प्रशस्ति" से विभूषित किया गया है। कन्नड भाषी पाठकों ने इस उपन्यास की खूब सराहना की है और इसे कन्नड साहित्य जगत का 'सर्वश्रेष्ठ उपन्यास' भी घोषित किया है। अतः कारंतजी के 'मैमनगल सुलियल्ली' को "मूकज्जिय कनसुगलु" (मूकज्जी के सपने, जो "भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार" से पुरस्कृत उपन्यास है) उपन्यास के उपरांत कन्नड का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना जा सकता है। क्योंकि "मैमनगल सुलियल्ली"में कारंतजी का दृष्टिकोण सीमित न रहकर विशाल रूप धारण कर गयाहै। उन्होंने इस उपन्यास में मानव की यौन समस्या और वेश्या-समस्या से संबंधित अपने विचार प्रकट किए हैं। कारंत ने समाज में फैली हुई वेश्या-समस्या की बुराई का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने के साथ-साथ तन-मन संबंधी यौन-विचारों को भी अपने व्यापक दृष्टिकोण से जाँचा है, परखा है, विश्लेषण किया है।[1] अतः कारंत जी का "मैमनगल सुलियल्ली" उपन्यास मानव की यौन-समस्या और वेश्या-समस्या पर आधारित एक यथार्थवादी, नगर जीवन से संबंधित सामाजिक समस्यामूलक उपन्यास है।

प्रस्तुत उपन्यास का प्रमुख कथ्य है यौन-समस्या। इस उपन्यास का हर एक पुरुषस्त्री पात्र इस समस्या से जूझता हुआ दिखाई देता है । उपन्यास की भूमिका में कारंत जी यह स्वीकार करते हैं कि "मनुष्य में यौन संबंधी एक प्रबल शक्ति होती है। मनुष्य केवल पशु नहीं है वह मनोदेही भी है।"[2] उपन्यासकार के इस वक्तव्य से यहाँ उपन्यास की वस्तु तथा रचनाकार की धारणा स्पष्ट हो जाती है। मन के बिना यदि मनुष्य की केवल देह होती तो उसे कोई भी नैतिक प्रश्न हो, संदेह हो, संदिग्धताएँ हो, अथवा मूल्य-शोध की चिंता हो, नहीं सताती थीं। विशेषकर मंजुला के संदर्भ में कारंत जी यौन-समस्या को लेकर स्त्री-पुरुषों के यौन-संबंधों को धनोर्पाजन का साधन मानकर अनेक प्रश्नों को प्रस्तुत उपन्यास में उठाते हैं। यहाँ समुद्र-तटीय नगर बसरूर के इतिहास का चित्रण करते हुए उपन्यासकार ने प्रसंगवश इस यौन-समस्या का विस्तारपूर्वक चित्रण किया है। क्या पेट की भूख की तरह ही मन और तन की भी भूख नहीं होती? कोई कब तक हटपूर्वक मूक रह सकती है? गाँव की सडकों पर चलते हुए, मंदिर के परकोटे के भीतर प्रदक्षिणा करते हुए, तीज-त्योहारों में अपने-अपने नाज-नखरें दिखाते समय उनकी आँखें, कान और मन दूसरों की तरह ही स्वाभाविक रूप से सतर्क रहते हैं। कभी-कभी अपने-आप पलकें उठ जाती हैं, दूसरों को देख भी लेती हैं। जब कोई अपने को चाहने वाला दिखाई देता है तो वे मुस्कराकर उसे अपनी ओर आकर्षित भी करती हैं। कई बार हुआ भी ऐसा कि गाँव के अनेक तीज-त्योहारों में, जमघटों में, उत्सवों में, शादी-व्याह के अवसरों पर अक्सर उनकी आँखें मिलजातीं हैं। वे सकुचाते हुए भी अपने मन की बातें उनसे कर लेतीं हैं ।इस प्रकार उन्हें अपने जीवन की इच्छापूर्ति करने के मौके भी मिलजाते हैं।"[3]

चार पीढ़ियों के इतिहास को प्रस्तुत करनेवालेइस उपन्यास का काल विस्तार लगभग 19 वीं सदी के मध्य भाग से लेकर 20वीं सदी के मध्य भाग तक, अर्थात एक सौ वर्ष की कालावधि को अपने में समेट रखा है। उपन्यास के चार प्रमुख नारी पात्र हैं - भवानी, मंजुला, शारी और चन्द्री। ये चारों नारी पात्र अपना पडोसी नारायण अडिगा से संस्कृत काव्यों, नाटकों और शास्त्रीय संगीत का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इसलिए नारायण अडिग के लिए यौन-सुख का मतलब है तन-मन दोनों को समान रूप से संतुष्ट करना। इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर उस संतुष्टि के लिए आजीवन सपने देखने वाली उपन्यास की नायिका मंजुला के जीवन में मुख्य रूप से सात पुरुषों का आवागमन होता है। उनमें कं. वासुदेव पै और गंजप्पा केवल उसके शरीर का भोग करते हैं। मंजुला अपनी आत्मकथा में लिखती है कि 'हमारे गाँव में हुँकार भरते हुए घूमनेवाले मंदिर के साँड में और उन दोनों के चेहरे में कोई भी अंतर नहीं दिख पाया।'[4] उसी प्रकार मंजुला की "देह बजाने पर धुन अभिव्यक्त करनेवाली वीणा है" कहने वाला मेक्के मने साहूकार उसे समझने में असमर्थ हो जाता है। शीनप्पामें पुरुषत्व की कमी दिखती है। बाकी, उल्लूरजी बडा रसिक रहा, जो मंजुला के मन को समझकर स्नेह, सहानुभूति और प्रीति जताता रहा ।

मंजुला उसके प्रति अगाध श्रध्दा, आदर भाव रखती है। उसकी संगति से प्राप्त अनुभवों के विषय में मंजुलालिखती है "वर्ष में एक बार खूब खिलकर खुश्बू बिखरनेवाली लाल जूही की लता ही सही।" [5] उस परिस्थिति में मंजुला यह स्वीकार करती है कि यौन-सुख में शरीर से अधिक मन का पात्र होता है। जब लक्ष्मण तीर्थ का मंजुला के जीवन में आगमन हुआ था और उसके साथ जो भोगा था, अनुभव किया था, उसका वर्णनयहाँ मंजुला अत्यंत भावात्मक रीति से करती है। 'पारस्परिक समागम में दोनों ने समाधि स्थिति के समान आनंद पाया था । मेरे हाथ आयी वह न कोमल, न कठिन उस देह में कहाँ-कहाँ धुन बजाने वाले बटन हैं और किस बटन को छूने से अपनी कामना संतुष्ट हो सकती है, यह पहचान कर, वीणा बजाकर आनंद मनाया था। वह तो एक मानव देह है, ऐसा मुझे मालूम ही नहीं हुआ।" देह सुख प्राप्त करने के लिए लक्ष्मण तीर्थ का मंजुला के जीवन में अचानक प्रवेश हुआ था। परंतु अपने यति नियमों के कारण मंजुला के जीवन से वह उसी प्रकार दूर भी हो जाता है। तात्पर्य यह है कि यौन-सुखानुभव में तन का पात्र ही महत्वपूर्ण होता है। फिर भी वह तन-मन के मधुर मिलन के लिए तब-तब चटपटाती रहती है। इतना ही नहीं, परदेश गये अपने पुरुषको लेकर उसके मन मेंजब यह बात घर कर जाती है, तो मंजुला अपने तन-मन संबंधी यौनसुख की काम-पिपासाओं को तृप्त करने के प्रयत्न में यहाँ तक कह देती है कि वह भी वहाँ विरक्त होकर नहीं रह रहा है। तब इनके लिए अपनी इच्छा दबा पाना और कठिन हो जाता है। धीरे-धीरे इस बारे में समाज का डर अपने आप खतम हो जाता है। तब यह महसूस किया जाता है कि जीवन अपना है। उस पर दूसरों के अंकुश की आवश्यकता नहीं है।"[6]

"मैमनगल सुलियल्ली" में धन-संपत्ति की दृष्टि से पम्मा-दुग्गी की जोडी को उपन्यास के शिल्प विधान में कुछ अलग ही तरह से प्रस्तुत किया गया है। निम्न जाति की, खाने-पीने के लिए कुछ भी न मिलने के बावजूद, आदर्श प्रेम दांपत्य का प्रतीक ऐसी कितनी ही जोडियाँ कारंतजी के उपन्यासों में तब-तब दिखाई देती रहती हैं। उदाहरण के लिए 'केवल मनुष्यरू' (केवल मनुष्य) उपन्यास की सूरा-काली की जोडी देख सकते हैं। यथार्थवादी कारंतजी कई संदर्भों में यौन-सुख की सफलता के रूप में सामाजिक रूपकों अर्थात आर्थिक–व्यवहारिक शक्तियों को लाकर खडा कर देते हैं। लेकिन पम्मा–दुग्गी हो अथवा सुरा-काली हो, खाने-पीने के लिए कुछ भी न मिलने के बावजूद दैहिक रूप से अंगविहीन हैं। दुग्गी अंधी है, तो पम्मा बूढ़ा है। इस तरह के लोग मंजुला के लिए आदर्श हैं। समाज में मंजुला से हीन रूप गुण-संपन्ना पम्मा-दुग्गी की जोडी उपन्यासकार के लिए भी आदर्श है । अतः यहाँ पर उपन्यासकार कारंतजी स्पष्ट रूप में स्वीकार करते हैं कि सच्चे प्रेम का अर्थ सुधरे हुए मनों का मिलन है। किंतु मंजुला अपनी माँ, बेटी और पोती की भाँति तन-मन के भंवर में फंसकर हाथ-पैर मारने लगती है। उस भंवर से बचकर पार हो जाने का उसका विश्वास केवल भ्रम मात्र था और कुछ नहीं ।

कारंतजी ने प्रस्तुत उपन्यास में यौन संबंधों के चार चेहरों को पाठकों के सामने रखा है । मंजुला के संदर्भ में वे चार चेहरे इस प्रकार हैं-

- ✓ परिस्थिति-जन्य सामाजिक दबाव में आकर, मुख्यतः आर्थिक कारणों से व्यापारिक-वस्तु बननेवाला यौन-संबंध;
- ✓ विशिष्ट परिस्थितियों के दबाव में आकर तिरस्कार किया जाने वाला यौन-संबंध;
- ✓ धार्मिक चारदीवारी के भीतर नियंत्रित किया जाने वाला यौन-संबंध;
- ✓ धार्मिक चारदीवारी के बाहर रहकर सामाजिक मान्यता प्राप्त यौन-संबंध ।

मगर दूसरे एक चेहरे को छोड़कर बाकी तीनों चेहरों को लेकर कारंतजी यहाँ दो तरह के द्वन्द्वात्मक विचार व्यक्त करते हैं। एक, "मैमनगल सुलियल्ली" उपन्यास के कथ्य-शिल्प को उसके पात्रों की दृष्टि से न देखकर, वस्तुतः कृति के शिल्प की दृष्टि से देखने पर कृति का आशय अधिक स्पष्ट हो जाता है । दूसरा, मंजुला का पात्र-चित्रण यहाँ वैभवीकृत न होकर, वह भी दूसरों की भाँति तन-मन के भंवर में फंसकर कसमसाती रहती है । किंतु

रचनाकार ने यहाँ किसी एक चेहरे को भी यौन-संबंध के परिप्रेक्ष्य में स्वीकार न करके अंततः उसके सभी चेहरों को मानवीय परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत उपन्यासका दूसरा प्रमुख कथ्य है वेश्या समस्या। कारंतजी उपन्यास की भूमिका में लिखते हैं "कथा एक वारांगना के चारों ओर घूमती रहती है।" "मैमनगल सुलियल्ली" एक असाधारण वेश्या को सहानुभूति के साथ चित्रित करनेवाला उपन्यास है जिसकी नायिका वेश्या मंजुला है। अतः मंजुला के वंश का इतिहास आठ-दस पीढ़ियों का है। उसकी पहली पीढ़ी के वंशज किसी अनिवार्य परिस्थिति में आकर वेश्या वृत्ति को अपनाये होंगे। श्रृंगार कानशा भी इसका एक कारण हो सकता है। फिर भी उनका उसके लिए खुला जीवन था।वे खुले रूप से उस जीवन को अपनाए थे। उस प्रकार के जीवन में सुप्त-आशाएँ, नाज-नखरे, राग-विराग हो सकते हैं, किंतु उनको समझनेवाले कितने लोग हैं? समझने की कोशीश करने वाले कितने लोग हैं? "हम तन बेचने के लिए ही हैं, न कि मन" इस कथन में दृढ़ विश्वास बनाये रखकरकुलवृत्ति को निष्ठा के साथ चलाते आनेवाली मंजुला की माँ भवानी से लेकर मंजुला, शारी, कपिला आदि इस वेश्या समस्या का शिकार होती हैं। शारी का जीवन निर्वाह इसी वेश्या-वृत्ति पर निर्भर था, तो वह यहाँ तक सोचती है कि अपने बाद उसकी अपनी बेटी चन्द्री भी इस वृत्ति को अपनायें और अपने बुढ़ापे का सहारा बनें। चन्द्री को लेकर शारी में एक आशा की किरण फूटती है। स्कूल को आते जाते समय अपनी बेटी के रूप-रंग को कोईन कोई रसिक अवश्य देखेगा, पसंद भी करेगा । चन्द्री की शिक्षा समाप्त होते ही शारी दुग्गण्णा से सलाह पाकर बेटी का भविष्य संवारने का संकल्प करती है। अपना भाग्य ठीक नहीं है; भावी दामाद से उद्धार होने की उत्कट इच्छा उसमें पनपने लगती है। न जाने क्यों, इस बात को अपनी बेटी के सामने कहने से वह कतराती रहती है। जब कोई एक्का दुक्का पुरुष घर आता है तो शारी बहुत ही आशापूर्ण स्वर में कहती है कि "चन्द्री, कोई आया है, जरा देखना।" तब चन्द्री "जैसे आया है, वैसे ही चला जायेगा" कहकर पडौसी के घर जाकर शारदा के साथ बतियाती बैठ जाती है। इससे शारी का दुःख गुस्से में बदल जाता है। तब भी चन्द्री का मन टस से मस नहीं होता। कहती है "उस एक बात को छोडकर और कुछ भी कह ले माँ, मैं करने के लिए तैयार हूँ। "[7] वेश्या शारी अपनी बेटी को एक आर्थिक संसाधन का स्रोत समझती रही और ऐसा समझना भी उसके लिए अनिवार्य ही था। शारी की इस मनःस्थिति का चित्रण कारंत जी प्रस्तुत उपन्यास में अत्यंत सहानुभूतिपूर्वक करते हैं। यहाँ पर कारंतजी मानसिक रूप से उस मनःस्थिति को अस्वीकार करते हुए, मास्टरनी बनकर अथवा और कोई भी नौकरी पाकर अपना जीवन-निर्वाह कर लेने के प्रयत्न में - नये जीवन का संकल्प करने वाली चन्द्री के सपनों को स्वीकार करते हैं। उधर मंजुला वेश्या के जीवन-क्रम को ही धन कमाने का साधन मानती थी तो इधर भवानी, शारी और कपीला भी उसी को जीवन यापन का साधन समझती रहीं। लेकिन शिवराम कारंतजी को चन्द्री के स्वतंत्र जीवन की कल्पनाएँ ही अधिकउचित लगती हैं। जीवन-निर्वाह के लिए 'तन-मन' बेचने की वृत्ति का चन्द्री प्रज्ञापूर्वक तिरस्कार करती है। अतः शिवराम कारंतजी "मैमनगल सुलियल्ली" उपन्यास में वेश्या-समस्या का कोई समाधान न देकर, उसके यथार्थ रूप को दर्शाने का प्रयत्न करते हैं।

डॉ. शिवराम कारंत जी "मैमनगल सुलियल्ली" उपन्यास में यथास्थान आर्थिक विपन्नता का चित्रण भी अत्यंत प्रभावशाली ढंग से करते हैं। परिस्थितिजन्य आर्थिक अभाव के दबाव में आकर व्यापारिक-वस्तु बन जानेवाला यौन-सुख का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास के प्रथम भाग में ही अद्भुत रूप में चित्रित हुआ है । अंग्रेज, पुर्तगाली, डच आदि विदेशी व्यापारी लोग कन्नड-प्रांत के समुद्र-तटीय नगरों में डेरे डालने लगे। तब इससे "फिरंगी लोग" और "वेश्या व्यापार" भी बसरूर में जोरों पर पनपने लगा। और इधर से भी समुद्री-व्यापार के लिए गाँव के नाविक, व्यापारी लोग दूर-दूर तक विदेशों में जाने लगे। इन परिस्थितियों में उनकी स्त्रियों को अनिवार्य रूप से अपना शरीर बेचकर जीवन-यापन करना पडा था । उपन्यासकार कारंत जी उसको इस

प्रकार चित्रित करते हैं “कई तो पेट न भर पाने के कारण ही नाविक वृत्ति अपनाते हैं। पेट की खाई पाठने के लिए बसरूर के आस-पास कितने परिवार नहीं बसे? गुजारा नहीं कर पानेवाले घाटियों और उससे भी कहीं दूर काम के लिए चले जाते हैं, कमाते हैं और साल में एक या दो बार घर आते हैं। अपने परिवार के साथ चार दिन सुख के गुजारते हैं। लाया हुआ पैसा जब खतम हो जाता है तो फिर मुँह लटकाये वापस चले जाते हैं। यह स्वाभाविक ही है। जाकर छः महीने, साल या दो साल तक घर की ओर मुँह न करें और बीच-बीच में घर चलाने को थोडा बहुत पैसा न भेजें तो घरवाली स्त्रियाँ भला क्या कर सकती हैं? उन्हें घर को चलाना दुश्वार हो जाता है। घर में खाने के लाले पड जाते हैं। ऊपर से घरों में बडे बूढे बुजुर्ग लोग रहते हैं जो कभी-कभी बीमारी के शिकार होते हैं। उनके इलाज के लिए और अपने छोटे-छोटे बच्चों की छोटी-छोटी फरमाइशें पूरी करने के लिए पैसे चाहिए। पैसे न मिलने पर घर में बच्चे और बड़ों के साथ-साथ उन स्त्रियों को भी उपवास करना पड़ता है। भूख सहन करने की भी एक सीमा होती है। जब वह सीमा लाँघ जाती है तब किसी प्रकार जीने की बात रह जाती है। ऐसी स्थिति में व्यथित कितनी ही स्त्रियाँ व्यभिचार करने के लिए विवश क्यों नहीं होतीं?”[8] इतना ही नहीं “हम तन बेचने के लिए ही हैं, न कि मन” ऐसा मन में दृढ़विश्वास बनाये रखकर कुलवृत्ति को निष्ठा के साथ- चलाते आने वाली मंजुला की माँ भवानी से लेकर मंजुला, शारी, कपिला आदि इस वेश्या समस्या का शिकार होती हैं।[9] इस प्रकार “मैमनगल सुलियल्ली” उपन्यास में कारंत जी आर्थिक विषमता का चित्रण भी स्थान-स्थान पर करते हैं।

उपर्युक्त इन समस्याओं के अतिरिक्त तन-मन के संबंधों को लेकर शिवराम कारंत जी एक ओर लक्ष्मणतीर्थ के प्रसंग में धार्मिक समस्या का, और चन्द्री के प्रसंग में शिक्षा की समस्या का चित्रण करते हैं, तो वहीं दूसरी ओर भवानी-गंगोल्ली साहूकार और रामप्पाअड़िग-कावेरम्मा के प्रसंग में गृहस्यधर्म का विश्लेषण भी अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से करने में सफल होते हैं। इस प्रकार कारंत जी का प्रसिध्द उपन्यास “मैमनगल सुलियल्ली” वर्ण्य-विषय की दृष्टि से वेश्याओं की समस्या पर आधारित है, जो अपने सहज, स्वाभाविक रचना-शिल्प में अद्‌भुत माना जाता है ।कथ्य रोचक ही नहीं, उसमें मनोरंजन, उत्सुकता, कौतुहल और नवीनता भी आ गई है। कथा का निर्वाह, विकास और विस्तार धीरे-धीरे सहज और स्वाभाविक ढंग से हुआ है। उपन्यास की नायिका मंजुला, जो एक वारांगना है, उसके चरित्र की साधारण से साधारण बातों और परिवर्तनों का अच्छा चित्रण हुआ है। कथावस्तु के विकास में आनेवाली घटनाओं में लेखक कारंतजी पाठकों को आगे घटित होनेवाली घटना की कल्पना करने के लिए आभास देकर भी, उनकी उत्सुकता जिज्ञासा बनाए रखते हैं। यथार्थ जीवन के घात-प्रतिघात के संघर्ष के बीच में से कथा का निर्दिष्ट दिशा में विकास होता है।

वस्तुतः प्रस्तुत उपन्यास वेश्याओं की वास्तविक दशा को पाठकों के सामने रखने का प्रयास करता है । इसकी कथावस्तु अत्यंत चिरपरिचित, प्रभावपूर्ण रही है। पुरुष-वर्ग यौन- संबंधों के प्रति किस कदर निर्दयी हो सकता है और किस प्रकार परिस्थितियों का भरपूर फायदा उठाने की ताक में रहता है, यह पाठक प्रस्तुत उपन्यास में देख सकते हैं। पात्रों का चयन सहज, स्वाभाविक एवं उपयुक्त है। संवाद कथा को आगे बढाने वाले पात्रानुकूल हैं। भाषा-शैली भी पात्र और देशकाल वातावरण के अनुकूल ही है। वेश्या-जीवन, बाजार, शहर, चहल-पहल, नाटकों, उत्सवों, संगीत-आयोजनों, वेश्यालयों आदि का वातावरण निर्माण करने में यह उपन्यास बेजोड है। अपने उद्देश्य तक पहुँचने में भी यह सफल रहा है। कुल मिलाकर शिवराम कारंत के महान उपन्यासों में “मैंमनगल सुलियल्ली” उपन्यास को हम रख सकते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रेमचंद और शिवराम कारंत- एक तुलनात्मक अध्ययनःबी.एल. लिंगप्पाः डी.डी.इ, एस.वी. विश्वविद्यालय, तिरुपति, 2009, पृ.119.
2. मैमनगल सुलियल्ली (तन-मन -हिन्दी अनुवाद)– शिवराम कारंत – भूमिका से पृ. 1, 2.
3. वहीः पृ. 12.
4. वही: पृ. 201.
5. वही: पृ.230.
6. वहीः पृ. 12.
7. वही: पृ. 12.
8. वही: पृ. 11, 12.
9. वही: पृ. 197.